हाथी नृत्य को नया स्वरूप देना *

दुव्वुरी सुब्बाराव

इस वर्ष का हक्सर स्मारक व्याख्यान देने के लिए मुझे आमंत्रित करने के लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यह एक ऐसा सम्मान है जो मेरे लिए अमूल्य है। पी.एन. हक्सर, जिनकी याद में यह व्याख्यान श्रृंखला शुरू की गई है, एक श्रेष्ठ सिविल सर्वेन्ट, असाधारण विद्वान और एक महान द्रष्टा थे जिन्होंने स्वतंत्रता पश्चात के हमारे इतिहास के नाजुक तथा प्रायः उथल-पुथल वाले वक्त में आर्थिक और राजनीतिक प्रबंधन पर गहरा प्रभाव डाला था।

पी.एन. हक्सर

2. मुझे श्री हक्सर को व्यक्तिगत रूप से जानने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। 1970 के शुरू में जब मैं आइ.ए.एस में आया तो वे सरकार के शीर्ष सोपान पर थे और एक नीति-निर्माता के रूप में उनकी ख्याति बहुत ऊँची थी। जब मैं अपने कार्यकाल के शुरुआती दौर में देश के दूर-दराज के जिलों में कार्य कर रहा था तब हम विकास-नीति में श्री हक्सर के योगदान की कहानियां सुना करते थे, पहले प्रधान मंत्री के प्रधान सचिव के रूप में और फिर योजना आयोग के उपाध्यक्ष के रूप में।

3. सिविल सर्वेन्ट्स ज्यों-ज्यों शीर्ष पर पहुंचते हैं, उनमें प्रशासन के किसी एक विभाग में विशेषज्ञता की प्रवृत्ति आ जाती है लेकिन श्री हक्सर के बारे में कमाल की बात यह है कि उन्होंने कई विभागों में दक्षता हासिल की जैसे राजनय विकास, प्रशासन तथा आर्थिक नीति प्रबंधन और वह भी वृहत रूप से। उन्होंने भूतपूर्व सोवियत यूनियन के साथ नीतिगत मित्रता का समझौता किया, बंगलादेश युद्ध के बाद शिमला समझौते के लिए पर्दे के पीछे की कूटनीति और भूतपूर्व राजाओं के प्रिवी पर्सों को समाप्त करने में अग्रणी भूमिका निभाई और भूमि सुधारों में भी योगदान दिया। रिज़र्व बैंक के परिप्रेक्ष्य से उनका सबसे बड़ा योगदान 1969 में बैंकों का राष्ट्रीयकरण करना था। इस नीति की अच्छाइयाँ-बुराइयाँ अभी भी अभी भी बहस का विषय हैं परंतु यह निर्विवाद है कि बैंक राष्ट्रीयकरण ने आर्थिक और सामाजिक विकास को बैंकों की कार्यसूची का अंतर्निहित हिस्सा बनाकर, वाणिज्य बैंकों और रिज़र्व बैंक के अधिदेश में नाटकीय ढंग से परिवर्तन कर दिया।

4. इस हक्सर स्मारक व्याख्यान के लिए विषय निर्धारित करने के लिए मुझे काफी कठिनाई हुई। रिज़र्व बैंक के गवर्नर के रूप में मैं भाषण की बहुत कम वचनबद्धताएं देता हूँ और हर बार मैं किसी बारीक विषय पर अपना ध्यान केंद्रित करता हूँ जिसमें विस्तार की बजाय गहराई में अधिक जाता हूँ परंतु ऐसी सीमित सोच स्वर्गीय श्री हक्सर की व्यापक विशेषज्ञता और उनके विशाल ज्ञान के प्रति न्याय नहीं कर पाएगी, और भारत के आर्थिक तथा राजनैतिक इतिहास-क्रम में उन्होंने जो दूरगामी प्रभाव छोड़ा है, उसके प्रति तो बिल्कुल नहीं। उनकी याद को सही सम्मान देने के लिए मैंने निर्णय किया है कि मैं बड़ा परिदृश्य चुनूंगा और भारत की विकास चुनौतियों पर बोलूंगा। मुझे ज्ञात है कि मैं अधिकतर जो बातें करूँगा वे रिज़र्व बैंक की परिधि के बाहर की होंगी। व्यक्तिगत स्तर पर मैं अपने लिए सुविधाजनक परिधि से भी बाहर आऊँगा। श्री रशपाल मल्होत्रा तथा प्रो. सुच्चासिंह गिल के प्रोत्साहनों ने मुझे इस चुनौती को स्वीकारने के लिए मजबूत बनाया है।

भारत की वृद्धि कथा

5. भारत ने 2003-08 की पंचवर्षीय अवधि में 9 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि प्राप्त की । जिस राष्ट्र ने एक बार यह यकीन कर लिया था कि हिंदू विकास दर ही इसकी नियति है, उसके लिए यह उल्लेखनीय वृद्धि खुशियां मनाने की वजह बनी। इससे ये आशाएं भी बंधीं कि भारत द्वि-अंकीय वृद्धि दर प्राप्त कर सकता है।

6. जिस वैश्विक वित्तीय संकट ने विश्व के प्रायः हर देश को अपनी गिरफ्त में ले लिया था उसने भारत की वृद्धिकथा को भी पटरी से उतार दिया। हालांकि अन्य देशों के मुकाबले हम इससे जल्दी संभले, परंतु वृद्धि दर अभी भी संकट-पूर्व के स्तर पर आनी बाकी है । इस बारे में व्यापक उत्सुकता है कि हम उच्च वृद्धिपथ की वजह से पटरी से उतरे और इस संबंध में बहुत से सवाल पूछे जा रहे हैं; क्या हमारी वृद्धि कथा का स्वर-भंग हुआ? क्या भारत की संभावित वृद्धि दर में गिरावट संकट के कारण आई ? जिन वृद्धि-चालकों ने 2003-08 के दौरान हमें सफलता दिलाई क्या वे अभी भी कायम हैं? हम द्विअंकीय वृद्धि तक कब पहुंचेंगे? और इसे प्राप्त करने के लिए हमें क्या करना चाहिए?

* नवंबर 25, 2011 को ग्रामीण एवं औद्योगिक विकास अनुसंधान केंद्र में भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव द्वारा दिया गया हक्सर स्मारक व्याख्यान।

हाथी भी नृत्य करते हैं

7. इन सभी प्रश्नों का मेरे पास एक ही सीधा जवाब है कि भारत की वृद्धि-कथा भरोसे योग्य है। यदि पूर्व एशियंस टाइगर हैं और चीन ड्रैगन है तो भारत एक हाथी है - विशाल संभाव्यता वाला एक मजबूत जीव, परंतु जिसकी चाल धीमी है, उस विश्व के लिए, जिसका विश्वास यह था कि हाथी पशु होते हुए भी अलग पशुओं जैसा उग्र नहीं होता, उच्च वृद्धि-पथ पर हमारी यात्रा ने सिद्ध कर दिया है कि हाथी भी नृत्य कर सकता है। पर इस हाथी नृत्य में, वैश्विक वित्तीय संकट की ''चिड़िया-घर-पार्टी'' ने अवरोध डाला और इसे वापस पथ पर लाने के लिए हमें इस नृत्य की पुनर्रचना करनी पडेगी।

8. इसलिए भारत को अपनी वृद्धि-गति फिर से प्राप्त करने और उसे आगे बढ़ाने के लिए हमें कई चुनौतियों से निपटना होगा। अब मैं उन दस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चुनौतियों की रूपरेखा प्रस्तुत करूंगा जिनपर विचार करना, वृद्धि की सीढ़ी चढ़ने के लिए मेरी दृष्टि में ज़रूरी है।

पहली चुनौती: कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाना

9. पहली चुनौती है, कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाना। स्वतंत्रता प्राप्ति के शुरू के वर्षों की खाद्यान्न की कमी के दौर से हम अब काफी आगे निकल आए हैं और जनसंख्या बढ़ने के बावजूद हम खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता बनाए रखने में समर्थ हुए हैं जिसका मुख्य कारण सिंचाई में निवेश, उन्नत कृषि विधियाँ और बेहतर प्रौद्योगिकी है। परंतु हाल के वर्षों में खाद्यान्न आत्मनिर्भरता के हाशिए में क्षरण एक चिंता का विषय बन गया है। खाद्यान्न-क्षेत्र में आपूर्ति और मांग के बीच में जो अंतर आया है वह कुछ हद तक सफलता की समस्या है जो कि अनाजों को खाने की आदतें बदलने के परिणामस्वरूप खाने में प्रोटीन आधारित खाद्यान्नों के प्रति झुकाव से हुआ है, जिससे बढ़ी हुई आमदनी, खासकर ग्रामीण आमदनी में बढ़ोतरी परिलक्षित होती है। इसके बावजूद यहि हम संरचनात्मक खाद्य-स्फीति के मूल कारणों से निपटने में समर्थ नहीं होंगे तो समावेशी विकास की हमारी खोज, संकट में पड़ जाएगी।

10. कुछ विश्लेषकों का तर्क है कि समग्र वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में कृषि चिंता का विषय नहीं हो सकती क्योंकि यह जीडीपी का केवल लगभग 15 प्रतिशत ही है और जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था परिपक्व होगी, यह हिस्सा और भी गिरेगा, परंतु यह तर्क दोषपूर्ण है। कृषि का हिस्सा कम और गिरता हुआ होने के बावजूद इसमें श्रमशक्ति का 53 प्रतिशत हिस्सा कार्य करता है। इसके अतिरिक्त कृषि का, अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के साथ महत्त्वपूर्ण आपूर्ति-मांग जुड़ाव है। इसलिए मूल्य दबावों को रोकने, ग्रामीण आय बढ़ाने और वृद्धि को और अधिक समावेशी बनाने के लिए, कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाना ज़रूरी है।

11. दूसरी हरित क्रांति प्रारंभ करने के लिए कई कदम उठाने जरूरी हैं, जिनमें से कुछ हैं - और अधिक सरकारी निवेश, और अधिक निविष्टि क्षमता, मृदा संरक्षण, उन्नत कृषि विधियां, वर्षा की विविधताओं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति सुनम्यता आदि। अग्रगामी और पश्चगामी सहसंबंधों के लिए ग्रामीण बुनियादी ढांचे तथा आपूर्ति श्रृंखला में निवेश किया जाना जरूरी है। हमें यह भी ध्यान में रखने की जरूरत है कि भूमि और पानी की लागतें सदा बढ़ती ही हैं; और समावेशी विकास से वेतन भी बढ़ेंगे जिससे मुद्रास्फीति पर दबाव बढ़ेगा। बढ़ती लागतों के संदर्भ में उत्पादकता में सुधार अवश्यम्भावी हो जाता है ताकि उच्च मूल्यों संबंधी उत्पादकों की जरूरतों और ग्राहकों की कम कीमतों की जरूरतों के बीच संतुलन बनाया जा सके।

दूसरी चुनौती: रोजगार बढ़ाना

12. वृद्धि को समावेशी बनाने के लिए दूसरी प्रमुख चुनौती है, रोज़गार के अवसरों को बढ़ाना। अब जब पहले से अधिक लोग कार्य कर रहे हैं, नौकरियों का संकट पैदा हो गया है। यह आश्चर्यचकित करने वाली बात भी नहीं है, क्योंकि किसी भी निर्धन देश में बेरोजगारी आर्थिक पीड़ा का एक बड़ा महत्त्वपूर्ण कारण होता है।

13. बेरोज़गारी हमारे लिए सबसे बड़ी समस्याओं में से एक हो सकती है। परंतु इस समस्या का विश्लेषण उससे भी बड़ी चुनौती है क्योंकि इस संबंध में कोई विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। ग्रामीण क्षेत्र में भारी मात्रा में बेरोजगारी और अपूर्ण रोज़गारी है परंतु इस समस्या की प्रकृति और आकार अस्पष्ट है। असंगठित उद्योग और सेवा क्षेत्रों में, ''कम उत्पादकतावाली नौकरियों'' में करोड़ों लोग लगे हैं। भारत का महँगा और तकनीकी दृष्टि से समुन्नत सूचना प्रौद्योगिकी सेवा क्षेत्र, चाहे संसार को चकाचौंध कर रहा हो मगर आम धारणा के विपरीत, इसमें 30 लाख से ज्यादा लोग नहीं लगे हैं। इसलिए नौकरियों की समस्या यह है कि असंख्य लोगों के पास काम नहीं है और जिनके पास है, उन्हें अपनी क्षमता से बहुत कम कार्य मिला है।

14. राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) के आंकड़े बताते हैं कि 2004-05 से 2009-10 की अवधि के दौरान, बेरोज़गारी दर तथा रोज़गार वृद्धि दर-दोनों में गिरावट आई है। यह कुतूहलपूर्ण है। मगर यह इसलिए है क्योंकि बहुत विशाल संख्या में युवा शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं मगर नौकरियां लेने वाले कम हैं। मगर यह केवल अस्थायी राहत की स्थिति है क्योंकि ज्यों ही ये लोग शिक्षा पूरी करके बाहर आएंगे, इस श्रम शक्ति से जुड़ जाएंगे। इसके अलावा और भी

कई दबाव हैं। जैसे-जैसे कृषि उत्पादकता बढ़ती है, तो कृषि क्षेत्र से लाखों अतिरिक्त मजदूर बाहर आ जाएंगे और उन्हें कृषि क्षेत्र से बाहर नौकरियां ढूंढ़नी पड़ेंगी। इसके अतिरिक्त और अधिक महिलाएं भी श्रम शक्ति में शामिल हो जाएंगी और वे भी नौकरियों की मांग करेंगी। इन सब प्रवृत्तियों को साथ मिलाकर देखें तो अनुमान बताते हैं कि आगामी 20 वर्षों में भारत की श्रम शक्ति 25-30 करोड़ बढ़ जाएगी।

15. इतनी विशाल संख्या के लिए उत्पादक नौकरियां खोजना एक बड़ी चुनौती है और इसका उत्तर इसमें निहित है कि वृद्धि को तेज किया जाए और इससे भी आवश्यक वृद्धि की 'रोज़गार-उन्मुखता' को बढ़ाया जाए। लेकिन इतनी नौकरियां आएंगी कहां से? इसकी जांच के लिए जीडीपी, तथा नौकरियों में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के संबंधित अंशों को देखना दिलचस्प रहेगा। निम्नलिखित सारणी में 2009-10 के आंकड़े दिए गए हैं:

जीडीपी तथा रोजगार के क्षेत्रगत हिस्से 2009-10

	जीडीपी का हिस्सा	रोजगार का हिस्सा
	(प्रतिशत)	
कृषि	15	53
उद्योग क्षेत्र	20	12
सेवा क्षेत्र	65	35

16. उपर्युक्त आंकड़े इस बात की जरूरत को स्पष्ट रूप से रेखांकित करते हैं कि लोगों को कृषि की कम उत्पादकता वाली नौकरियों से निकाल कर उद्योग और सेवा क्षेत्र में ले जाया जाए। कृषि क्षेत्र की अतिरिक्त श्रम शक्ति के एक हिस्से को 'गैर-कृषि संबद्ध-गतिविधियों' में लगाया जा सकता है। निर्माण क्षेत्र में भी अवसर पैदा होंगे क्योंकि यह तेजी से बढ़ रहा है मगर सेवाक्षेत्र में नौकरियों के अवसरों में बड़ा विस्तार कौशल में सुधार के बिना संभव नहीं हो पाएगा। इसमें बहुत समय लगेगा, इसलिए नौकरियां बनाने का सबसे बड़ा बोझ विनिर्माण क्षेत्र पर ही आता है।

17. काफी समय तक यह विश्वास किया गया कि भारत ने विनिर्माण क्षेत्र को लांघकर, कृषि से सीधे सेवा क्षेत्र में छलांग लगाकर विकास की निदर्शी नियम-पुस्तिका का उल्लंघन किया है। हमारा अनुभव स्पष्ट दर्शाता है कि ऐसी छलांग को बनाए नहीं रखा जा सकता। हमें नियम-पुस्तिका पर टिकना ही पड़ेगा और रोज़गार के विस्तार के लिए विनिर्माण क्षेत्र की शरण लेनी ही पड़ेगी।

18. हाल ही में जारी की गई राष्ट्रीय विनिर्माण नीति में, जीडीपी में विनिर्माण का हिस्सा 16 प्रतिशत से बढ़ाकर 25 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है, और 2022 तक 100 मिलियन का अतिरिक्त रोजगार निर्मित करने का लक्ष्य रखा गया है। विनिर्माण क्षेत्र पर दिए जाने वाले इस बल से निर्मित होने वाली नौकरियों की संभावनाओं का पूरा लाभ लेने के लिए हमें अपने श्रम-नियमों और रोजगार विनियमों को उदार बनाने की ज़रूरत है ताकि श्रम शक्ति को असंगठित क्षेत्र में धकेलने संबंधी प्रतिकूल प्रोत्साहनों को हटाया जा सके।

19. यदि मैं 'जनसांख्यिकीय लाभ' के मुद्दे पर चर्चा न करूँ तो रोजगार निर्माण की चुनौती पर मेरी चर्चा अधूरी रहेगी। जनसांख्यिकीय लाभ का तर्क जो कि हाल के वर्षों में काफी चर्चित हुआ है, इस प्रकार है। जनसांख्यिकी भारत के पक्ष में है क्योंकि काम करने वाली उम्र के लोगों की जनसंख्या कुल जनसंख्या के मुकाबले तेज़ी से बढ़ रही है। कार्यशील आयु की बढ़ती हुई यह जनसंख्या कमाएगी, बचाएगी, ऊँची बचतों तथा ऊँचे निवेश में योगदान करेगी जिससे अधिक वृद्धि होगी। क्या हम 'जनसांख्यिकी ही मुकद्दर है' के तर्क को कही लंबा तो नहीं खीच रहे? जनसांख्यिकी लाभ के बारे में कुछ भी अपरिहार्य नहीं है। जनसांख्यिकी लाभ हमें तभी मिलेगा, यदि और सिर्फ यदि, यह बढ़ती श्रम शक्ति के लिए नौकरी बनाने में समर्थ हों।

20. सारांश में भारत की वृद्धि की गति को बनाए रखने की दूसरी चुनौती रोज़गार के अवसरों को बढ़ाना तथा श्रम की उत्पादकता में वृद्धि करना है।

तीसरी चुनौती: उत्पादकता बढ़ाना

21. नौकरियों का विस्तार, समावेशी विकास की चुनौती का एक पहलू है। दूसरा पहलू है उत्पादकता बढ़ाना। ऐतिहासिक साक्ष्य प्रत्यक्ष रूप से बताते हैं कि जब श्रमिक कृषि से द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों की ओर जाते हैं तो उत्पादकता की मात्रा एकदम बढ़ती है। अनुमानित गणनाओं से पता चलता है कि हमारे आर्थिक विकास की वर्तमान स्थिति में जब कोई कामगार अन्य क्षेत्रों की ओर जाता है तो उसकी उत्पादकता अंदाजन 5 गुना बढ़ती है।

22. उत्पादकता सुधार में उत्पादन के कारकों तथा साथ ही उपादन उत्पादकता का बेहतर प्रबंधन शामिल है। उत्पादन के कारकों के संबंध में कृषि क्षेत्र की अतिरिक्त श्रम शक्ति का प्रबंधन, घरेलू बचतों की दर को बढ़ाना, स्थायी विदेशी बचतों को आकर्षित करना, प्राकृतिक संसाधनों का टिकाऊ उपयोग और प्रमुख वृद्धि-क्षेत्रों की भूमि की मांग का प्रबंधन करना आवश्यक होगा।

23. उपादान उत्पादकता में सुधार प्रमुखतः श्रमशक्ति के कौशल को बढ़ाने पर निर्भर होगा। कौशल की कमी अब सिर्फ कमी ही नहीं रही, यह एक संकट बनती जा रही है। उदाहरणार्थ, हम स्टील का उत्पादन 120 मी.ट. करना चाहते हैं तो उसके लिए लाखों, कुशल लोगों की जरूरत पड़ेगी मगर कभी-कभी एक क्रेन ऑपरेटर को ढूंढना भी चुनौती

हो जाती है। कौशल की मांग बढ़ती है तो आपूर्ति कमजोर पड़ जाती है। भारत हर साल 3,50,000 इंजीनियर पैदा करता है, परंतु मुश्किल से एक चौथाई नियोजनीय होते हैं। हमारे पास 7000 आइटीआई हैं, मगर उनके पाठ्यक्रम बाबा आदम के जमाने के हैं।

24. कौशल प्रशिक्षण से प्रोत्साहन का मुद्दा जुड़ा होता है। कौशल विकास, अनिवार्यतः योग्यता से जुड़ा होता है जहां कि सामाजिक लागत-लाभ गणना, व्यक्तिगत लागत-लाभ गणना से ऊँची होती है। निजी क्षेत्र, कौशल में प्रोत्साहन देते वक्त झिझकता है क्योंकि कामगार अपना कौशल लेकर दूसरी जगह जा सकता है। इसी को देखते हुए भारत सरकार ने 2022 तक 500 मिलियन लोगों को प्रशिक्षित करने के लिए अपना महत्त्वाकांक्षी 'राष्ट्रीय कौशल विकास कार्यक्रम' सरकारी-निजी सहभागिता (पीपीपी) आधार पर प्रारंभ किया। कई राज्य सरकारें भी सरकारी-निजी सहभागिता आधार पर तथा अलाभ आधार पर, व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थाएं स्थापित करने की अनुमति प्रदान कर रही हैं।

25. निष्कर्षतः हमें वृद्धि दर बढ़ाने तथा वृद्धि की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए व्यापक क्षेत्रों के बीच उत्पादकता में सुधार लाने पर अपना ध्यान केंद्रित करने की ज़रूरत है।

चौथी चुनौती: शहरीकरण का प्रबंधन

26. ऐतिहासिक रूप से विभिन्न देशों और काल खंडों में, शहरीकरण और आर्थिक वृद्धि के बीच, एक मजबूत संबंध रहा है और जिसका कारण संभवतः दोनों ओर फैला है। अनुभवजन्य अध्ययनों से पता चलता है कि मध्यम आय वाले देशों में लगभग 50 प्रतिशत शहरीकरण होता है जबकि उच्च आय वाले देशों में 70 से 80 प्रतिशत शहरीकरण होता है। उदाहरण के लिए गत दो दशकों में चीन की तेजी से वृद्धि इसके कम मध्यम आय स्तर के अनुरूप रही और इसके शहरीकरण की दर वृद्धि के साथ बढ़ते हुए 1997 की 32 प्रतिशत से बढ़कर 2010 में 50 प्रतिशत हो गई। भारत में हम अभी शहरीकरण की दृष्टि से पीछे हैं। सुधार शुरू होने के बाद के 20 वर्षों में शहरी जनसंख्या का अनुपात 1991 के 26 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में मात्र 31 प्रतिशत हुआ।

27. इस प्रकार तेज होती वृद्धि, शहरीकरण के परिप्रेक्ष्य में, दो कार्य प्रस्तुत करता है। पहला, शहरीकरण की दर को बढ़ाया जाना है ताकि लोग उत्पादकता की सीढ़ी में ऊपर आ सकें और दूसरे, हमें शहरीकरण के दबावों का प्रबंधन सक्रियतापूर्वक करना है।

28. अनियोजित शहरीकरण से होने वाली क्षतियां हम पहले से ही देख रहे हैं जो कि मूलभूत सुविधाओं और सफाई पर पड़ने वाले बोझ, सुविधाओं पर पड़ रहे दबाव तथा सामाजिक सेवा प्रावधानों की अपर्याप्त तथा कम गुणवत्ता से परिलक्षित है। जिस गति से, बाहर से लोग शहरों में आ रहे हैं उसके लिए हमारे शहर बिल्कुल तैयार नहीं हैं और उसका परिणाम झोपड़-पट्टियों के उदय और जमीन पर जबरदस्ती कब्ज़े के रूप में हुआ है। अनियोजित शहरीकरण से अपराध, कानून व्यवस्था, प्रदूषण, भीड़ भडक्का तथा पर्यावरणीय गिरावट जैसी समस्याएं भी पैदा हुई हैं।

29. शहरी बुनियादी ढांचे के विकास के लिए विशाल संसाधन चाहिए। ईशर जज अहलूवालिया तथा अन्य ने अनुमान लगाया है कि 2012-2031 की 20 वर्षीय अवधि में, शहरी बुनियादी ढांचे के लिए लगभग 40 ट्रिलियन रुपयों के निवेश की जरूरत पड़ेगी जिसका मतलब है कि प्रतिव्यक्ति अंदाजन 100 अमरीकी डॉलर के वार्षिक औसत निवेश की जरूरत होगी। इतनी बड़ी राशि के संसाधन जुटाना, स्पष्टतः एक बड़ी चुनौती है जिसके लिए अधिक कराधान, कुशल-परियोजना आयोजना तथा कार्यान्वयन, अभिनव शहरी सुशासन तथा शहर में बाहर से आने वालों को शहरी पर्यावरण में शामिल करने के लिए अधिक संवेदनशीलता की ज़रूरत होगी।

पांचवीं चुनौती: बुनियादी ढांचे की कमी को पूरा करना

30. अब यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि बुनियादी ढांचे की कमी वृद्धि की गति को तेज़ करने की दिशा में सबसे बड़ी रुकावट होती है फिर भी अभी तक हम इस कमी को पूरा नहीं कर पाए हैं। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में बुनियादी ढांचे में 500 बिलियन अमरीकी डॉलर के निवेश का लक्ष्य था लेकिन असली व्यय काफी कम रहने की संभावना है। बारहवीं योजना में 2012-17 की पंचवर्षीय अवधि में लक्षित निवेश को दुगुना करके एक ट्रिलियन अमरीकी डॉलर किया गया है जिसका मतलब यह है कि बुनियादी ढांचे में वार्षिक निवेश जीडीपी के वर्तमान 6 प्रतिशत के मुकाबले बढ़कर 10 प्रतिशत हो जाएगा।

31. अपनी राजकोषीय बाध्यताओं को देखते हुए स्पष्टतः सरकार इतने विशाल संसाधन जुटाने में समर्थ नहीं हो पाएगी। बारहवीं योजना के लक्ष्यों में से लक्षित निवेश की 50 प्रतिशत राशि निजी क्षेत्र से लानी पड़ेगी और अधिकतर परियोजना कार्यान्वयन सरकारी - निजी सहभागिता (पीपीपी) प्रकृति का होगा।

32. इस प्रकार, बुनियादी ढांचा निवेश में तीन उप-चुनौतियां हैं: आवश्यक संसाधन जुटाना, विनियमों तथा ठेका व्यवस्थाओं में सुधार तथा कुशल 'परियोजना आयोजना' और निष्पादन।

33. अब मैं यहां बुनियादी ढांचा वित्तपोषण में मदद के रिज़र्व बैंक के प्रयासों के बारे में बताना चाहूँगा । बुनियादी ढांचे के लिए दीर्घावधि वित्त चाहिए और यह आदर्शतः बीमा और पेंशन निधियों जैसे दीर्घावधि स्रोतों से आना चाहिए। चूंकि भारत में इनके बाज़ार अभी मजबूत नहीं हैं इसलिए बुनियादी ढांचे के वित्तपोषण का बोझ बैंकों पर आ जाता है। परंतु ऋण जोखिमों की वजह से, बैंक भी, एक सीमा के बाद, इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास के लिए वित्तपोषण नहीं कर सकते। बुनियादी ढांचे के वित्तपोषण में बैंकों को परिसंपत्ति-देयता असमानता की समस्या का भी सामना करना पड़ता है, क्योंकि बैंकों की देयताएं अधिकांशतः अल्पावधि होती हैं जबकि बुनियादी ढांचे का निधीयन दीर्घावधि होता है।

34. रिज़र्व बैंक ने बैंकों द्वारा बुनियादी ढांचे के वित्तपोषण को सुगम बनाने के लिए संभव विवेकाधीन सीमाओं तक विनियामक मानदंडों को सरल बनाया है। इनमें ये सुधार शामिल हैं - एकल ऋणकर्ताओं तथा ऋणकर्ता समूहों के संबंध में उच्चतर ऋण मानदंड बनाना, बैंकों को इन्फ्रास्ट्रक्चर ऋण निधियों (आइडीएफ) में निवेश करने तथा टेक-आउट वित्तपोषण व्यवस्थाओं के क्षेत्र में प्रवेश की अनुमति प्रदान करना, बुनियादी वित्तपोषण तथा प्रोमोटर्स इक्विटी के वित्तपोषण के लिए बैंक गारंटियों से संबंधित विनियमों को नरम बनाना तथा इन्फ्रास्ट्रक्चर वित्त में विशेषज्ञता रखने वाली गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों का एक अलग वर्ग बनाना (बुनियादी वित्त कंपनियां)।

35. कॉर्पोरेट बांड बाजार का विकास बुनियादी ढांचे के वित्तपोषण में वृद्धि करने में मुख्य भूमिका निभाएगा। सरकार और रिज़र्व बैंक, दोनों ने कॉर्पोरेट बांड बाजार के विकास के लिए कई नवीन प्रयास किए हैं और कुछ विचाराधीन हैं । हालांकि कॉर्पोरेट बांड बाजार के आपूर्ति पक्ष को सरल बनाने वाले ये उपाय महत्त्वपूर्ण हैं फिर भी हमें यह भी जानना होगा कि कॉर्पोरेट बांड बाजार मांग की कमी झेलने वाला बाजार रहा है जिसका आशय यह है कि हमें इसके परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से भी इस पर विचार करना होगा।

छठी चुनौती: सामाजिक क्षेत्र परिणामों में सुधार लाना

36. भारत के मानव विकास संकेतक काफी निराशाजनक हैं । यूएनडीपी के मानव विकास सूचकांक 2011 के अनुसार, 187 देशों में से हमारा स्थान 134 वां है जो कि स्पष्टतः राष्ट्रों के संघ में नीचे से तीसरा है। चाहे इन वर्षों में हमने शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में कुछ सुधार किया हो, तो भी जन्म के समय बच्चे की जीवित रहने की दर, शिक्षा प्राप्ति, तथा पोषाहार जैसे स्तरों के संकेतकों की दृष्टि से, हमारा दर्जा अभी भी औसत से कम है।

37. ऐतिहासिक साक्ष्य दर्शाते हैं कि आर्थिक विकास और सामाजिक विकास मजबूती से एक दूसरे से जुड़े हैं, और इनका कारण संभवतः इनकी पारस्परिक क्रिया है। हाल के वर्षों में सरकार ने शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषाहार पर व्यय बढ़ाया है, सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रमों को पुनर्गठित किया है और वितरण प्रणालियों में सुधार लाने के लिए प्रयत्न किए हैं।

38. हमारे सामाजिक क्षेत्र कार्यक्रमों की कमियों में से एक यह है कि हम उत्पादन पर ध्यान देते हैं परिणाम पर नहीं। सेवा वितरण में सुधार लाने के लिए हमें प्राथमिक शिक्षा तथा मूलभूत स्वास्थ्य पर अधिक व्यय करना चाहिए परंतु यह व्यय हमें बहुत कुशलतापूर्वक करना चाहिए क्योंकि बेहतर शिक्षा और स्वास्थ्य केवल किए गए व्यय पर ही निर्भर नहीं होता बल्कि व्यय की गुणवत्ता पर भी निर्भर होता है।

39. इसे मैं एक उदाहरण देकर समझाता हूँ। भारत की केंद्रीय और राज्य सरकारें शिक्षा पर जीडीपी का कुल 4 प्रतिशत खर्च करती हैं। अब लक्ष्य जीडीपी के 6 प्रतिशत तक खर्च करने का रखा जा रहा है। यह आवश्यक है, परंतु काफी नहीं है। चीन और श्रीलंका जैसे हमारे पड़ोसी देश शिक्षा पर अपनी-अपनी जीडीपी का 4 प्रतिशत से भी कम खर्च करते हैं फिर भी उनकी साक्षरता का स्तर हमारे 74 प्रतिशत की तुलना में 90+प्रतिशत के आस-पास है। स्वास्थ्य क्षेत्र में भी यही स्थिति है । इससे यह स्पष्ट होता है कि केवल व्यय की मात्रा ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, व्यय की गुणवत्ता भी महत्त्वपूर्ण है जो कि परिणामों से मापी जाती है। उदाहरण के लिए शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत एक गैर-सरकारी संगठन, 'प्रथम' की 2010 की रिपोर्ट के अनुसार, देहाती इलाकों में पहली से आठवीं कक्षाओं में पढ़ रहे केवल 17 प्रतिशत बच्चे कोई शब्द पढ़ पाते हैं, और केवल 40 प्रतिशत ही अंक पहचान पाते हैं।

सातवीं चुनौती: वित्तीय समावेशन को प्रोत्साहित करना

40. वित्तीय समावेशन आवश्यक क्यों है? यह आवश्यक इसलिए है क्योंकि 'न्यायोचित वृद्धि' को बनाए रखने की यह एक आवश्यक शर्त है। ऐसे उदाहरण विरले होंगे जहां किसी व्यापक वित्तीय समावेशन के बिना किसी कृषि अर्थव्यवस्था ने स्वयं को किसी 'उद्योगोत्तर आधुनिक सोसायटी' के रूप में परिवर्तित कर लिया हो। वित्तीय सेवाओं तक आसान पहुंच रखने वाले लोगों के रूप में, हम सभी अपने अनुभवों से यह जानते हैं कि, आर्थिक अवसर वित्तीय पहुंच के साथ दृढ़ता से जुड़े होते हैं। ऐसी पहुंच निर्धनों के लिए विशेषकर शक्तिदायक होती है क्योंकि इससे उन्हें बचत बढ़ाने, निवेश करने, तथा ऋण प्राप्त करने के

अवसर मिलते हैं। इसके अलावा, वित्तीय सेवाओं तक पहुंच से निर्धन लोगों को आय संबंधी आघातों से स्वयं को सुरक्षित रखने के लिए बीमा करवाने तथा बीमारी, परिवार में मृत्यु तथा रोजगार जाने की स्थिति में स्वयं को सक्षम बनाने में भी मदद मिलती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वित्तीय समावेशन से निर्धन लोग सूदखोरों के चंगुल से बचे रहेंगे।

41. निर्धन लोगों को सूक्ष्म स्तर पर मदद करने के अलावा वित्तीय समावेशन बृहत स्तर पर भी लाभ पहुंचाता है। लाभार्थियों के बैंक खातों में सीधे पैसे अंतरित करके सरकार अपने सुनिश्चित उपाय कार्यक्रमों में होने वाले नुकसानों को कम कर सकती है। वित्तीय समावेशन से बैंकों को कम लागत और स्थिर निधियों वाला एक विशाल भंडार प्राप्त हो जाएगा जिससे उन्हें अपने परिसंपत्ति-देयता प्रबंधन में मदद मिलेगी। इस प्रकार वित्तीय समावेशन गरीबों, बैंकों, केंद्रीय और राज्य सरकारों तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था - सबके लिए लाभकारी है।

42. तथापि भारत का बहुत सा हिस्सा अभी भी वित्तीय सेवाओं की पहुंच से बाहर है। भारत के 6,00,000 (छह लाख) गांवों में से 30,000 से भी कम में किसी वाणिज्य बैंक की शाखा है। देश की केवल 40 प्रतिशत जनसंख्या के पास ही बैंक खाते हैं और देश के पूर्वोत्तर भाग में तो यह अनुपात और भी कम है। किसी भी प्रकार की जीवन बीमा सुरक्षा रखने वाले लोगों का अनुपात केवल 10 प्रतिशत ही है और जिनके पास गैर-जीवन बीमा है उनका अनुपात तो मात्र 0.6 प्रतिशत ही है।

43. ये आंकड़े चाहे कितने भी उदास करने वाले हों, वित्तीय सेवाओं की परिधि से बाहर रह गए लोगों की सही तस्वीर नहीं पेश करते। जहां बैंक खाते खोले भी बताए गए हैं, वहां सत्यापन करने पर पता चला है कि खाते निष्क्रिय हैं। बहुत कम लोग हैं जो बैंकिंग लेन-देन करते हैं और उससे भी कम हैं जो ऋण लेते हैं। इस प्रकार देश के लाखों लोगों को अपनी आय अर्जन क्षमता बढ़ाने तथा उद्यम कौशल दिखाने के अवसरों को नकारा जा रहा है और ये बेचारे हाशिए पर आकर गरीबी की जिंदगी जीने को मजबूर हो जाते हैं।

44. गत चार वर्षों में रिज़र्व बैंक ने वित्तीय समावेशन बढ़ाने के लिए कई नए प्रयास शुरू किए हैं। हमारा लक्ष्य केवल यह नहीं है कि हर निर्धन परिवार के पास अपना एक बैंक खाता हो, बल्कि यह भी है कि खाते का उपयोग बचतों, धनप्रेषण तथा ऋण के लिए प्रभावी तौर पर किया जाए। हमारा सबसे महत्त्वाकांक्षी प्रयास है 'बिजनेस कॉरेस्पोंडेंट मॉडेल' अथवा 'शाखा रहित बैंकिंग', जिसके द्वारा दूर-दराज के गांवों में बैंकिंग सेवाएं पहुंचाई जाती हैं।

45. वित्तीय समावेशन में जो अब तक सबसे बड़ी रुकावट आई है वह यह है कि बैंक इसे एक बाध्यता के रूप में लेते हैं, न कि एक अवसर के रूप में। यदि बैंक थोड़ा-सा दीर्घावधि का दृष्टिकोण लें तो मुझे यकीन है कि उनका नज़रिया जरूर बदलेगा। कारोबारी कार्यनीति के पाठ्यक्रम में पढ़ाया जाने वाला एक उदाहरण आपको अवश्य याद होगा। एक जूता कंपनी के बिज़नेस कार्यपालक को बाजार संभाव्यताओं के आकलन के लिए एक बड़े विकासशील देश में भेजा गया। वहां उसने देखा कि लाखों लोगों के पांवों में जूते नहीं है। वह वापस आया और उसने प्रबंधन को बताया कि वहां बिज़नेस की कोई संभाव्यता नहीं है क्योंकि वहां लोग नंगे पांव रहते हैं। कुछ महीनों के बाद एक विरोधी कंपनी का कार्यनीति अधिकारी वहां गया और उसने भी वही सब देखा। वह वापस आया और उसने अपने प्रबंधन को बताया कि वहां करोबार की जबरदस्त संभावना है क्योंकि वहां लाखों जूते बिकेंगे। इस प्रकार यह मन:स्थिति का प्रश्न है। इसलिए सोच में यह बदलाव लाना वित्तीय समावेशन को सार्थक बनाने के लिए बहुत ज़रूरी है।

आठवीं चुनौती: वैश्वीकरण का प्रबंधन

46. विचारों, लोगों, वस्तुओं, सेवाओं तथा सीमा-पार पूंजी की गति के रूप में मापा जाने वाला वैश्वीकरण, गत 25 वर्षों की परिभाषित विशेषताओं में से निस्संदेह एक है। जो देश यह मानते थे कि भूगोल ही भाग्य है उनके सामने वैश्वीकरण ने न केवल अविश्वसनीय अवसर प्रस्तुत किए हैं बल्कि विकट चुनौतियां भी उनके सामने खड़ी की हैं। यह संकट के पूर्व के वर्षों में महामंदी, अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं में स्थायी वृद्धि, तथा उभरती अर्थव्यवस्थाओं में अपेक्षाकृत तेज़ वृद्धि और पूरे विश्व में कम और स्थिर मुद्रास्फीति, वैश्वीकरण के सकारात्मक पक्ष का संकेतक था, तो वैश्विक वित्तीय संकट का विनाशकारी रूप इसका नकारात्मक पक्ष था।

47. भारत विश्व के साथ एकीकृत हो रहा है और व्यापक रूप से और गहरे रूप से; और इतनी तेज़ी से जितना हम मानना भी नहीं चाहते। 2003-08 की अवधि में वृद्धि में आई उल्लेखनीय तेजी वैश्वीकरण का सकारात्मक पक्ष है। विश्व में हुई सतत वृद्धि और स्थायित्व से हम लाभान्वित हुए परंतु दूसरी ओर यह तथ्य कि हम संकट से प्रभावित हुए, चाहे दूसरे देशों से कम ही सही, वैश्वीकरण के नकारात्मक उदाहरण हैं। इस बात की हताशा न सही, निराशा तो हुई, कि हम 2008 के विश्ववित्तीय संकट से प्रभावित हुए और यह इसलिए

हुआ क्योंकि हमारी आशाएं इसी बात पर टिकी हुई थीं कि एक दशक पहले के एशियाई संकट से बिना किसी नुकसान के हम उबर आए थे। 2008 के संकट से हमें जो चोट लगी वह इसलिए कि 1990 के दशक के अंतिम वर्षों में आए एशियाई संकट और 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान भारत का विश्व से गहरा एकीकरण हुआ जैसा कि नीचे दी गई सारणी के आंकड़ों से स्पष्ट होता है।

भारत का विश्व से बढ़ता एकीकरण

	जीडीपी के प्रतिशत के रूप में	
	1998-99	2008-09
(निर्यात + आयात)/जीडीपी	20	41
दुतरफा (पूंजी + चालू प्रवाह)/ जीडीपी	44	112

48. जैसा कि स्पष्ट है, 1998-2008 की दस वर्षीय अवधि में भारत का दुतरफा व्यापार दुगुना हुआ है, मगर दुतरफा चालू और पूंजी प्रवाह ढाई गुना बढ़ा जिससे प्रकट होता है कि विश्व से भारत का व्यापार एकीकरण गहरा हुआ, परंतु इसका वित्तीय एकीकरण और भी अधिक गहरा हुआ।

49. अब वैश्वीकरण एक आर्थिक शक्ति के रूप में आ चुका है। यह इतनी मजबूत ताकत है कि इसे पूरी तरह उलटा नहीं जा सकता। हालांकि छोटे मोटे अल्पावधि बदलाव आ सकते हैं जैसे कि नयनचंदा ने अपनी पुस्तक 'बाउंड टुगेदरः हाउ ट्रेडर्स प्रीचर्ज, एडवेन्चरर्स एण्ड वरियर्स शेप्ड ग्लोबलाइजेशन' में लिखा है। वैश्वीकरण सदा ही अपरिहार्य था, है और रहेगा। मानव इतिहास में कोई भी क्रांति सौम्य नहीं रही। वैश्वीकरण भी इसी का उदाहरण है, इसके नफे भी हैं और नुकसान भी।

50. जैसा कि विश्व के हर देश के मामले में है, हमारे लिए भी चुनौती यही है कि वैश्वीकरण के नुकसानों को कम रखा जाए और लाभ अधिक से अधिक लिए जाएं। जैसे-जैसे भारत वैश्वीकरण के और निकट जाता जाएगा, ऐसी बहुत सी चीजें हैं जो हमें लागत-लाभ-गणना को अपने अनुकूल बनाने के लिए करनी होंगी। मैं इस बिंदु की व्याख्या के लिए यहां दो उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगा।

51. वृहत परिप्रेक्ष्य में हमें 'असंभव त्रिमूर्ति' का प्रबंधन करना होगा। 'असंभव त्रिमूर्ति' सिद्धांत के अनुसार कोई भी देश एक नियत विनिमय दर, एक खुला पूंजी खाता तथा स्वतंत्र मौद्रिक नीति-एक साथ हीं अपना सकता। अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाएं, अन्य दो पैरामीटरों पर नीतिगत लाभ लेने के लिए, नियत विनिमय दर का त्याग कर देती हैं। उभरती अर्थव्यवस्थाएं एकाधिकार समाधानों से दूरी रखती हैं और मध्यवर्ती समाधानों का पक्ष लेती हैं। उदाहरण के लिए भारत में हमारा पूंजी खाता अंशतः खुला है, हम विनिमय दर को अस्थिर (फ्लोट) रखते हैं और केवल अतिरिक्त उतार-चढ़ावों और वृहत अर्थिक अस्थिरता में आने वाले अवरोधों से निपटने के लिए ही इसमें हस्तक्षेप करते हैं और हमारी घरेलू स्थिति पर बाह्य घटनाओं के प्रभावों को ध्यान में रखकर ही अपनी मौद्रिक नीति चलाते हैं। जैसे-जैसे हम अपनी अर्थव्यवस्थाओं को खोलेंगे हमारी चुनौती यही होगी कि हम असंभव त्रिमूर्ति का प्रबंधन कैसे जारी रख पाएं।

52. वैश्वीकरण चुनौती का एक अन्य आयाम है - नवोन्मेष। नवोन्मेष वृद्धि का हमेशा से स्रोत रहा है और रहेगा परंतु एक 'ज्ञान-अर्थव्यवस्था' में इसका महत्त्व बढ़ जाता है। यह इतिहास द्वारा सिद्ध है कि जब कोई अर्थव्यवस्था बढ़ती है तो पहले आय बढ़ती है फिर वेतन बढ़ता है और फिर यह श्रमप्रधान उद्योगों में प्रतियोगिता की भावना खो देती है और तब उसे नवोन्मेष के जरिए वृद्धि के लिए स्रोत ढूँढने पड़ते हैं या फिर यह फंदे में फंस जाती है जिसे 'मध्यम आय फंदा' कहते हैं। उदाहरण के लिए भारत में हमने सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग में तुलनात्मक लाभ उठाया क्योंकि हमारे पास श्रेष्ठ तकनीकी जनशक्ति थी और उसे अंग्रेजी का ज्ञान था। परंतु अब उस लाभ को चुनौती मिलने लगी हैं और दूसरे देश इन दिशाओं में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। इसलिए वैश्वीकरण का लाभ लेते रहने के लिए 'वैल्यू चेन' में खुद को ऊपर उठाना होगा और इसका एकमात्र रास्ता नवोन्मेष के द्वारा ही संभव है।

53. सारांश यह है कि वैश्वीकरण अपरिहार्य है और भारत वैश्वीकरण में और आगे बढ़ेगा। इसलिए हमें इसे अपने लाभ के लिए प्रयोग में लाना होगा ताकि हमारी वृद्धि की मात्रा और गुणवत्ता दोनों में इसका लाभ मिल सके।

नौवीं चुनौतीः स्थिर और अनुमेय वृहत् आर्थिक वातावरण प्रदान करना

54. वृद्धि के लिए स्थिर और अनुमेय वृहत् आर्थिक वातावरण की आवश्यकता होती है, यह स्वतः स्पष्ट है और इसे दुहराने की कोई आवश्यकता नहीं है। केवल ऐसे वातावरण में ही बचतकर्ता और निवेशक सही निर्णय लेने में समर्थ हो सकते हैं ताकि उनकी बचत, उत्पादक निवेश में तबदील हो सके। गत 25 वर्षों में जो भी देश संकट में पड़ा है वह 'अति' की कहानी ही बयान करता है। 'अति', जो असहनीय स्तर तक गई तो फिर 'अंतः स्फोट' हुआ, 'अति' के द्वारा प्राप्त तीव्र वृद्धि, 'आकर्षण' का कारण हो सकती है क्योंकि अंदर कुलबुला रही अस्थिरता के लक्षण तत्काल प्रकट नहीं होते परंतु जब अपरिहार्यतः 'अंतः स्फोट' हो जाता है, तब वृद्धि और कल्याण को जो क्षति पहुंचती है, वह बहुत भारी होती है।

55. मैं अब अपने दो बड़े कार्यों का संदर्भ देकर एक स्थिर बृहत् आर्थिक वातावरण की महत्ता पर बल देना चाहता हूँ। पहला है कर्ज-जीडीपी-अनुपातों को टिकाऊ स्तरों पर स्थिर रखने के लिए, केंद्र और राज्यों - दोनों के राजकोषीय घाटों में कमी लाना। राजकोषीय गैर-जिम्मेदारी से क्या नुकसान हो सकते हैं, यह हम स्वयं अपने तथा दूसरे देशों के अनुभव से देख चुके हैं। राजकोषीय समेकन का रोडमैप तैयार करते समय, हमें राजकोषीय समायोजन की गुणवत्ता का भी ध्यान रखना जरूरी है अर्थात् अनुत्पादक व्यय को निकाल बाहर फेंकना और वृद्धि बढ़ाने वाले व्यय को यदि बढ़ाना नहीं, तो सुरक्षित रखना है।

56. दूसरा कार्य है मुद्रास्फीति को पहले कम करके 5 प्रतिशत तक लाना तथा बाद में भारत के वैश्विक अर्थव्यवस्था में व्यापक एकीकरण के समनुरूप और भी नीचे लाना ।उच्च मुद्रास्फीति परिदृश्य, बचतकर्ताओं तथा निवेशकों, दोनों में अनिश्चितता की भावना पैदा करता है। इस समय जो मुद्रास्फीति हम अनुभव कर रहे हैं वह आपूर्ति आघातों तथा मांग दबावों, दोनों के परिणामस्वरूप है। रिज़र्व बैंक द्वारा किए जा रहे मुद्रा कठोरीकरण का लक्ष्य, मांग को सीमित करना तथा मुद्रास्फीति को रोकना है। आपूर्ति पक्ष को इसका पूरक बनाना चाहिए ताकि अर्थव्यवस्था के संभावित उत्पादन को बढ़ाया जा सके।

दसवीं चुनौती: बेहतर सुशासन

57. अब तक मैंने विकास को तेज़ करने की 9 चुनौतियों का उल्लेख किया है। इन चुनौतियों को पहचानना तथा उनका सामना करने के लिए योजनाएं बनाना, अपेक्षाकृत सरल कार्य है लेकिन जो अत्यंत कठिन कार्य है वह है इन नीतियों को कार्यरूप में परिणत करना; और यही है मेरी सूची की अंतिम मद ''सुशासन प्रदान करने की चुनौती''।

58. आर्थिक विकास और गरीबी उन्मूलन तथा साथ ही राजनैतिक इच्छा, इन सबके मूल में सुशासन आवश्यक है। यह एक ऐसा निर्विवाद सबक है जो गत 60 वर्षों में पूरे विश्व में लोगों ने विकास अनुभव के दौरान सीखा है।

59. अंततः सुशासन की गुणवत्ता ही वह तत्व है जो आर्थिक विकास की सफलता को असफलता से अलग करता है। विभिन्न देशों में अमूमन एक जैसी ही स्थितियों में एक जैसी ही नीतियों को लागू करने के नाटकीय ढंग से अलग-अलग परिणाम सामने आए हैं। हमारे अपने देश में भी एक ही तरह की विकास नीतियों को लागू करने के बावजूद विभिन्न राज्यों में अलग-अलग विकास परिणाम सामने आए हैं। विभिन्न देशों, तथा विभिन्न देशों के विभिन्न क्षेत्रों में एक जैसी नीतियां अपनाने के बावजूद उनके परिणाम में सुशासन के कारण ही इतनी भिन्नताएं सामने आती है। शोध अध्ययनों से प्रकट हुआ है कि प्रति व्यक्ति आय तथा प्रशासन की गुणवत्ता, आपस में मजबूती से, सत्याभासी चक्र के रूप में जुड़ी हैं जिसमें सुशासन का परिणाम आर्थिक विकास होता है।

हाथी नृत्य को नया स्वरूप देना

60. अब मैं निष्कर्ष पर आता हूँ। मैंने उन दस चुनौतियों का उल्लेख किया है जिनका सामना करना विकास की गति को तेज करने तथा विकास की गुणवत्ता पर ध्यान रखने के लिए ज़रूरी है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने जो यह सूची बनाई है वह पूर्ण नहीं है, और अलग-अलग लोगों द्वारा बनाई गई ऐसी सूचियों में विषयवस्तु तथा उनपर जोर देने की दृष्टि से भिन्नता हो सकती है। मैं आशा करता हूँ कि मेरी सूची कम-से-कम सोच-विचार के लिए एक आधार-बिंदु का कार्य ज़रूर करेगी।

61. हम सभी इस बात के लिए उत्सुक हैं कि हमारी अर्थव्यवस्था शेर जैसी तेज़ रफ्तार से दौड़े, न कि हाथी जैसी मंथर गति से चले। लेकिन कुछ ही पशु होते हैं जिनमें हाथी जैसा बल होता है और हाथी सदा मंथर गति से चलते ही नहीं, वे नृत्य भी करते हैं । और जब हाथी नृत्य करना शुरू कर देते हैं तो वे बहुत लंबे समय तक नृत्य करते हैं लेकिन नाचते समय हाथी कभी-कभी रास्ता भी भटक जाते हैं। इसलिए उनके नृत्य को नया रूप देना जरूरी होता है। अपना आखिरी वाक्य कहते हुए मैं यही सोच रहा हूँ कि स्व. श्री हक्सर ने इस हाथी नृत्य को नया रूप कैसे दिया होगा।